HANS SHODH SUDHA , Vol. 1, Issue. 1, (2020) pp. 129-135

स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में मूल्य आधारित शिक्षा की उपादेयता : एक समीक्षात्मक विश्लेषण

डॉ. सत्येन्द्र श्रीवास्तव

"आप की दृष्टि में एक शिक्षित व्यक्ति वह है जो केवल कुछ परीक्षाएं पास कर अच्छे व्याख्यान देता हो। ऐसी शिक्षा जो जीवन के संघर्षों से जूझने हेतु जन-साधारण को सशक्त बनाने में मदद न करे, जो उनके चरित्र को मजबूत न बनाए, परोपकार की भावना न विकसित करे, सिंह जैसा साहस न पैदा करे क्या उसका कोई मूल्य है?" *स्वामी विवेकानन्द*, बेलूर मठ, 1898

"ऐसी शिक्षा जो अच्छे और बुरे में भेद करना न सिखाए, अच्छे को अपनाने और बुरे से दूर रहना न सिखाए, वह एक मिथ्या- शिक्षा (मिसनोमर) है।" *गाँधी*

19 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में जिस विचारक के क्रांतिकारी विचारों ने पूरी दुनिया को प्रभावित किया और यह क्रम अभी भी जारी है, उनमें स्वामी विवेकानन्द सर्वप्रमुख हैं। उनके सरल किन्तु सारगर्भित विचार केवल मानव मस्तिष्क को ही प्रभावित नहीं करते बल्कि उसके हृदय पर भी अमिट छाप छोड़ते हैं। यद्यपि विवेकानन्द ने शिक्षा के ऊपर अलग से कोई पुस्तक नहीं लिखी लेकिन अपने जीवन के गहरे अनुभव के आधार पर उन्होंने विभिन्न व्याख्यानों में शिक्षा से संबन्धित जिन मुद्दों को उठाया, वे बेहद समीचीन हैं। सिस्टर निवेदिता अक्सर कहा करती थीं कि विवेकानन्द जो भी कहते या लिखते थे, वे पहले स्वयं उसका अनुभव करते थे। यही बात मूल्य-आधारित शिक्षा के सम्बंध में उनके विचारों पर भी लागू होती है।

'मूल्य' एक बहु-आयामी शब्द है, जिसके भीतर बहुत सारे नैतिक संप्रत्यय समाहित हैं जैसे ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, कर्तव्य, आत्म-सम्मान, सभी के प्रति करुणा, मनुष्यता का उत्थान, महिलाओं और वंचितों के प्रति विशेष आदर-भाव इत्यादि। एक मूल्य-आधारित शिक्षा में ये सारे तत्व समाहित होते हैं, इनके अभाव में वह केवल कुछ सूचनाओं का संग्रहण, शुष्क विचार मात्र रह जाएगी। इसलिए, शुरू में ही यह जानना जरूरी है कि शिक्षा 'क्या नहीं है' उसके बाद ही हम 'शिक्षा क्या है' समझ पाएंगे। शिकागो, धर्म-संसद से वापस भारत लौटने के बाद अपने एक व्याख्यान 'द फ्युचर ऑफ इंडिया' में वे कहते हैं-

"शिक्षा सूचनाओं का संग्रहण मात्र नहीं, जो आपके मस्तिष्क में ठूँस दी जाती है और जहाँ वह जीवन पर्यत अपच रूप में पड़ी रहती है। .....यदि आपने पाँच विचारों को पढ़कर अपने जीवन-चरित्र में उतार लिया तो आप उस व्यक्ति से ज्यादा शिक्षित हैं, जिसने पूरी लाइब्रेरी रट रखी हो यथा खरश्चन्दन भारवाही भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य। चन्दन के बोझ से लदे गधे को केवल उसका भार पता होता है, न कि मूल्य। यदि शिक्षा सूचनाओं का संग्रहण है तो पुस्तकालय दुनिया के सबसे बड़े मनीषी होते और विश्वकोश सबसे बड़े ऋषि।"[1]

इसी तरह का मत वे 23 दिसम्बर1898 को देवघर (वैद्यनाथ) से मृणालिनी बोस को लिखे पत्र 'आवर प्रेजेंट सोशल प्रॉब्लम्स' में व्यक्त करते हैं

"शिक्षा क्या है? क्या यह किताब याद करना है? नहीं। क्या यह ज्ञान की विविधता है? यह भी नहीं। एक ऐसा अभ्यास जिसके द्वारा संकल्प के आवेग और अभिव्यक्ति को नियंत्रित कर उन्हें उपयोगी बनाया जा सके, वह शिक्षा है। अब तक की शिक्षा में, पीढ़ियों से संकल्प को बलपूर्वक खत्म किया गया .. .... और मनुष्य धीरे धीरे मशीन बनता चला गया।"[2]

ये दोनों अभिव्यक्तियाँ बताती हैं कि 'शिक्षा क्या नहीं है'। दुर्भाग्य से इन्हें ही शिक्षा का असली अर्थ मान लिया गया। ऐसे में हमारे लिए शिक्षा का सही अर्थ जानना बेहद जरूरी है और यह भी कि हमें 'किस प्रकार की शिक्षा की जरूरत है'। शिक्षा के वास्तविक लक्ष्य की व्याख्या करते हुए 24 जनवरी 1898 को एक प्रश्न-उत्तर के दौरान विवेकानन्द कहते हैं

"हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति में वृद्धि हो, बुद्धि का विस्तार हो और जिससे व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके।"[3]

विवेकानन्द की दृष्टि में मस्तिष्क का सशक्तीकरण और चारित्रिक दृढ़ता शिक्षा की अपरिहार्य विशेषताएँ हैं। इनके अभाव

डॉ. सत्येन्द्र श्रीवास्तव, सहायक प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, हंस राज कॉलेज।

में शिक्षा केवल किताबी ज्ञान और निजी स्वार्थ की पूर्ति तक सिमटकर रह जाएगी। उनकी इस सोच के बारे में उपन्यासकार प्रेमचंद ने मई 1908 में पत्रिका 'जमाना' में लिखा था

"स्वामी जी की शिक्षा का आधार प्रेम और शक्ति है। निर्भीकता उसका प्राण है और आत्म-विश्वास उसका धर्म है। उनकी शिक्षा में अनुनय-विनय के लिए तनिक भी स्थान नहीं है।"[4]

इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विवेकानन्द शिक्षकों की भूमिका पर बहुत जोर देते हैं क्योंकि शिक्षक के कार्य-व्यवहार युवा मस्तिष्क पर बहुत गहरा असर डालते हैं। यह शिक्षक ही हैं जो विद्यार्थियों को किताबी और अकादेमिक ज्ञान के अलावा जीवन के कुछ बेहतरीन मूल्य बहुत सहज तरीके से सिखा सकते हैं, जो उन्हें जीवन-पर्यत याद रहते हैं,न कि केवल परीक्षा के समय तक। इसके लिए शिक्षक का चरित्र भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितनी कि उसकी बौद्धिक प्रवीणता। जैसा कि भक्ति-योग में वे 'क्वॉलिफिकेशन्स ऑफ द ऐसपिरन्ट ऐंड द टीचर' के अंतर्गत लिखते हैं

"अक्सर यह सवाल पूछा जाता है 'हम शिक्षक के चरित्र और व्यक्तित्व को क्यों देखते हैं? हमें तो केवल यह देखना चाहिए कि वह क्या कहता है।' यह दृष्टिकोण सही नहीं है .... एक शिक्षक को पूर्णतः शुद्ध होना चाहिए, तभी उसके शब्दों का कोई मूल्य होगा।"[5]

फरवरी 1897 को 'मद्रास टाइम्स' में दिये एक साक्षात्कार में वे कहते हैं कि मूल्य आधारित शिक्षा के लिए शिक्षक की चारित्रिक उत्कृष्टता बहुत जरूरी है। उनका मत है

"शिक्षा की मेरी अवधारणा शिक्षक के साथ व्यक्तिगत संपर्क रखना है .... शिक्षक की व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा के बिना कोई शिक्षा नहीं हो सकती। अपने विश्वविद्यालयों को देखिये। अपने पचास साल के जीवन में उन्होंने क्या किया? वे केवल परीक्षण करने वाले यंत्र बन गए। आम आदमी के दुख के लिए त्याग की भावना अभी भी हमारे देश में विकसित नहीं हो पायी है।"[6]

इसी बात का समर्थन करते हुए महात्मा गांधी ने भी कहा था कि एक शिक्षक का शिक्षण-कार्य उसके नैतिक आचरण से अनिवार्यतः जुड़ा होता है। एक कायर शिक्षक अपने विद्यार्थियों को साहस का और एक अनियमित शिक्षक कभी भी समयबद्धता का महत्व नहीं सिखा पाएगा। अपनी आत्मकथा में वे लिखते हैं

"मेरे विचार में बच्चों को कभी भी साधारण शिक्षकों के हवाले नहीं करना चाहिए। उनका पुस्तकीय ज्ञान उनके नैतिक मूल्य जितना महत्वपूर्ण नहीं है।"[7]

22 अक्तूबर 1925 को 'यंग इंडिया' में गाँधी ने जिन सात सामाजिक पापों की चर्चा की थी, उसमें एक पाप 'चरित्र के बिना ज्ञान' भी है। इसी से हम समझ सकते हैं कि गाँधी के लिए चरित्र की क्या महत्ता थी। अपनी आत्म-कथा के खंड 'ऐज स्कूल मास्टर' में वे लिखते हैं—"मैंने हृदय के स्वभाव या चरित्र-निर्माण को सदैव पहला स्थान दिया है ....मैं चरित्र-निर्माण को शिक्षा की बुनियाद मानता हूँ और यदि बुनियाद पक्की रख दी जाए तो अन्य बातें या तो बच्चे खुद या फिर अपने मित्रों से सीख लेंगे।"[8]

शिक्षा का स्वरूप विस्तृत होना चाहिए, तभी वह जन-सामान्य की उन्नति में महत्वपूर्ण कारक सिद्ध होगी। यही कारण है कि विवेकानन्द शिक्षा के लोकतंत्रीकरण के बहुत बड़े हिमायती थे। उनके अनुसार शिक्षा केवल कुछ समृद्ध लोगों के अपने ही स्वार्थ की पूर्ति का साधन न बने अपितु इसका एक सामाजिक सरोकार होना चाहिए, जिसमें वंचित वर्ग का विकास जरूर शामिल हो। इसका उद्देश्य बिना किसी भेदभाव के समूची मानव-जाति का उत्थान हो। जैसा कि 1896 में लंदन के एक साक्षात्कार में वे कहते हैं—

"बौद्धिकता केवल कुछ सुसंस्कृत लोगों का एकाधिकार नहीं होना चाहिए, इसका प्रसार ऊपर से नीचे की ओर जरूर होना चाहिए।"[9]

इस पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिए विवेकानन्द शिक्षित-वर्ग की जवाबदेही निर्धारित करना चाहते हैं। उनके अनुसार ये शिक्षित लोग, अशिक्षित और वंचित वर्ग के कल्याण के लिए कार्य करें, उनके पिछड़ेपन को दूर करके उन्हें समाज की मुख्य धारा में शामिल करें अन्यथा शिक्षा का पूरा उद्देश्य ही निष्फल हो जाएगा। नवम्बर 1894 में शिकागो से दीवान जी को लिखे पत्र में वे कहते हैं-

"मैं ऐसे व्यक्ति को विश्वासघाती कहूँगा जो शिक्षित होने के बाद, लाखों पीड़ित गरीबों के श्रम से विलासिता में पोषित होते हैं किन्तु उनके बारे में एक बार भी नहीं सोचते।"[10]

वस्तुतः हमारे देश की एक जो निरंतर समस्या रही है, उसमें हमने शिक्षा को कुछ अभिजात्य लोगों तक सीमित कर दिया और उनके लिए वह एक 'स्टेटस सिम्बल' बन गया। इन अभिजात्य लोगों ने अशिक्षित और गरीब लोगों को तिरस्कार की दृष्टि से देखा। यह मानसिकता मूल्य-आधारित शिक्षा के उस आदर्श के विपरीत है जो हर मनुष्य को समान दृष्टि से देखती है, जिसमें राजा-प्रजा, अमीरी-गरीबी, जाति, लिंग, सम्प्रदाय,धर्म का कोई विभेद नहीं होता। इस बात पर चिंता

व्यक्त करते हुए उन्होंने 24 अप्रैल 1897 को 'भारती' के संपादक सरला घोषाल को 'द एजुकेशन दैट इंडिया नीड्स' शीर्षक से दार्जिलिंग से लिखा—

"भारत की बर्बादी का एक प्रमुख कारण अहंकार और राजकीय सत्ता द्वारा ज्ञान और बौद्धिकता की इस धरती को कुछ मुट्ठी भर लोगों के हाथों में सीमित कर देना था। यदि हमें दुबारा उठना है..... तो शिक्षा का प्रसार जन-सामान्य तक करना होगा।[11]

स्पष्ट है कि शिक्षा को केवल कुछ विशिष्ट लोगों की निजी स्वार्थपूर्ति तक ही सीमित नहीं होना चाहिए अपितु इसका उद्देश्य जन-कल्याण होना चाहिए, इसे विचारों का संग्रह-मात्र नहीं अपितु जीवंत भी होना चाहिए, जिससे हर व्यक्ति का जुड़ाव हो। निश्चित रूप से बौद्धिकता और अच्छी नौकरी शिक्षा के महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं लेकिन ये अनिवार्य पक्ष नहीं हैं। इसलिए इनकी प्राप्ति मनुष्यता और नैतिक मूल्यों की कीमत पर नहीं होनी चाहिए। मानवता का दर्जा हमेशा निजी धन-अर्जन और बौद्धिकता से ऊपर रहेगा। इतिहास साक्षी है कि जिन लोगों ने भी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकास के नए प्रतिमान गढ़े हैं वे बौद्धिक रूप से भले ही औसत रहे हों लेकिन नैतिक मूल्य और सत्यनिष्ठा की दृष्टि से उच्चकोटि के इंसान थे। अल्बर्ट आइन्सटीन ने जोर देकर कहा था - "अधिकांश लोग कहते हैं कि महान वैज्ञानिक बुद्धि से बनते हैं। वे लोग गलत हैं : यह काम चरित्र से संभव है।" प्रसिद्ध मानव-परोपकारी और व्यवसायी वारेन बुफे (1930 -) ने इस संबंध में बहुत महत्त्वपूर्ण बात कही है

"किसी व्यक्ति में तीन चीजें देखो बुद्धि, ऊर्जा और सत्यनिष्ठा। यदि उसमें सत्यनिष्ठा नहीं है तो पहले दो पर ध्यान ही मत दो।"[12]

यह एक स्थापित तथ्य है कि पढ़ा-लिखा किन्तु मूल्यविहीन व्यक्ति एक अनपढ़ किन्तु नैतिक व्यक्ति की तुलना में समाज के लिए ज्यादा खतरनाक है। हम लोगों को स्कूल के दिनों में पढ़ाया गया था कि एक भूखा और अनपढ़ व्यक्ति मालगाड़ी से केवल कुछ किलोग्राम अनाज चुराएगा लेकिन नैतिकता से रहित विश्वविद्यालय का टॉपर पूरी मालगाड़ी ही उड़ा देगा। शिक्षित व्यक्ति के इस विरोधी प्रवृत्ति के सम्बंध में मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने 1948 में अपने स्नातक की पढ़ाई के समय, मोरहाउस कॉलेज, अटलांटा के 'स्टूडेंट पेपर' में 'द पर्पज ऑफ एजुकेशन' शीर्षक से लिखा था-

"शिक्षा का उद्देश्य लोगों को गहन और आलोचनात्मक चिंतन के लिए तैयार करना है। लेकिन ऐसी शिक्षा जो कार्य-कुशलता के साथ समाप्त हो जाए वह समाज के लिए एक बहुत बड़ा खतरा सिद्ध होगी। नैतिकता के अभाव में बुद्धि से श्रेष्ठ व्यक्ति सबसे खतरनाक अपराधी हो सकता है।..... हमें यह अवश्य ध्यान रखना होगा कि बुद्धि ही पर्याप्त नहीं है। सच्ची शिक्षा का उद्देश्य है - बुद्धि और चरित्र।"[13]

संदेश साफ है! यह मूल्य आधारित शिक्षा ही है जो समाज से अनैतिक और भ्रष्ट मूल्यों को दूर कर एक बेहतरीन समाज का निर्माण कर सकती है। हम सभी जानते हैं कि आज के समय का सबसे बड़ा संकट पैसे या प्राकृतिक संसाधनों का नहीं अपितु मूल्यों की विकृति का संकट है। और इससे निपटने में मूल्य-आधारित शिक्षा ही सबसे कारगर हथियार है। यह मूल्य आधारित शिक्षा ही है जो 'स्व' और 'पर' में भेद करना नहीं सिखाती तथा व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी पक्षों नैतिक, भावनात्मक और बौद्धिक को समान महत्त्व देती है। दूसरे शब्दों में हृदय की पवित्रता मस्तिष्क की कुशाग्रता जितनी ही महत्त्वपूर्ण है। जैसा कि 27 अक्टूबर 1896 को लंदन के अपने व्याख्यान में स्वामी जी कहते हैं

"हम मस्तिष्क और हृदय का संयोजन चाहते हैं। अवश्य ही हृदय महान है। हृदय के माध्यम से जीवन की महत्वपूर्ण प्रेरणाएं आती हैं। मैं हजार बार एक छोटे हृदय और बिना मस्तिष्क वाला व्यक्ति होना पसंद करूंगा बजाए हृदय-रहित एक विशाल मस्तिष्क के। जीवन, प्रगति उसी के लिए संभव है जिसके पास हृदय है ,जो बिना हृदय केवल मस्तिष्क वाला है , वह शुष्कता में ही मर जाता है।"[14]

इसे और स्पष्ट करते हुए लंदन के एक अन्य व्याख्यान 'वेदान्त ऐंड प्रिविलेज' में वे कहते हैं-

"भगवान और शैतान के बीच का अंतर और कुछ नहीं है सिवाए नि:स्वार्थ और स्वार्थ के। शैतान भी भगवान जितना ही ज्ञानी और शक्तिशाली है, बस उसमें पवित्रता नहीं है। यही चीज आधुनिक दुनिया में भी लागू होती है : बिना पवित्रता के ज्ञान और शक्ति की अधिकता ने इंसान को शैतान बना दिया।"[15]

इसलिए सच्ची शिक्षा का अर्थ मानव-जीवन का सर्वांगीण शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास है। एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था इनमें से किसी की भी उपेक्षा नहीं कर सकती। एक बेहतरीन शिक्षा मन, शरीर और आत्मा में एक बेहतरीन सामंजस्य की प्रस्तावना करती है। आधुनिक मनोविज्ञान भी इस तथ्य को मानता है कि मनुष्य एक समग्र प्राणी है, उसके जीवन में किसी एक पक्ष पर जरूरत से ज्यादा ध्यान देने और दूसरे की उपेक्षा करने से उसका व्यक्तित्व विखंडित हो जाता है।

यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है। किसी को यह

गलतफहमी नहीं होनी चाहिए कि विवेकानन्द वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा के विरोधी थे और मूल्य आधारित शिक्षा के लिए उन्होंने इनकी तिलांजलि दे दी। वे वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान के महत्व को बखूबी जानते थे। उनकी चिंता केवल इस बात को लेकर थी कि इन्हें पाने के प्रयास में मनुष्य कहीं मानवीय अस्मिता को ही न खो दे।[16] यदि हम आज के शैक्षणिक संस्थानों पर नजर डालें तो पाएंगे कि वे बहुत बड़ी संख्या में सॉफ्टवेयर इंजीनियर,अधिकारी, डॉक्टर, प्रोफेसर, वकील, फिल्मकार, खिलाड़ी, खेल-विशेषज्ञ, सीए, सीएस, मीडिया-विशेषज्ञ इत्यादि पैदा कर रहे हैं। लेकिन विडम्बना देखिये कि अच्छी आर्थिक स्थिति होने के बावजूद इनमें से ज्यादातर लोग अपने गलत जीवन-मूल्य, उपभोक्तावादी जीवन-शैली के कारण एक मानसिक त्रासदी से गुजर रहे हैं। वे अपनी योग्यता के कारण अपने-अपने क्षेत्र में अच्छे सिद्ध हो रहे हैं, लेकिन क्या वे अच्छे इंसान हैं? यही वह प्रश्न है जिसका जवाब हमारे शैक्षणिक संस्थानों, नीति-निर्माताओं और परिवार के सदस्यों को सोचना है। पैकेज आधारित शिक्षा-व्यवस्था ने उनकी नैतिक अंत:चेतना को खोखला कर दिया है। ये अपने पारिवारिक जीवन में बिखरे और मानसिक सुकून को तरसते हुए लोग हैं। निश्चित रूप से वे अपने पूर्वजों की तुलना में ज्यादा 'बुद्धिमान' और 'आत्म-विश्वासी' हैं, लेकिन समस्या यह है कि इतनी प्रतिभा और आर्थिक-आत्मनिर्भरता के बावजूद अपने चरित्रबल में वे बहुत कमजोर हैं। विवेकानन्द की दूरदृष्टि ने इस समस्या को 130 साल पहले ही पहचान लिया था, इसलिए उन्होंने धन-अर्जन के बजाए चरित्र-निर्माण को शिक्षा का उद्देश्य माना था। अपने व्याख्यान 'द फ्युचर ऑफ इंडिया' में वे कहते हैं -

"हमें जीवन का निर्माण करने वाले, मनुष्यता को बनाने वाले और चरित्र-सृजन करने वाले विचारों की अत्यंत आवश्यकता है।"[17]

शिक्षा से संबन्धित कोई भी विचार तब तक सम्पूर्ण नहीं हो सकता,जब तक वह महिलाओं की स्थिति पर बात न करे। महिलाओं का सशक्तीकरण विवेकानन्द की मूल्य-आधारित शिक्षा व्यवस्था का एक अपरिहार्य पक्ष रहा है। वे महिलाओं, विशेषकर भारतीय महिलाओं की दयनीय स्थिति से काफी चिंतित थे। 23 सितंबर 1893 को शिकागो में मिस पॉटर पाल्मर द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम 'विमिन ऑफ द ईस्ट' में वे कहते हैं 'किसी राष्ट्र की प्रगति जाँचने का सबसे अच्छा पैमाना है - महिलाओं के प्रति इस राष्ट्र के लोगों का व्यवहार।'[18] इसे और स्पष्ट करते हुए 1895 में वे अपने भ्राता-भिक्षु शशि को लिखते हैं

"जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होता,तब तक दुनिया के कल्याण की कोई संभावना नहीं है। किसी चिड़िया के लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं।"[19]

विवेकानन्द के अनुसार यह शिक्षा ही है, जिसके द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार होगा। दिसम्बर 1898 को 'प्रबुद्ध भारत' में दिये एक साक्षात्कार 'ऑन इंडियन विमिन -देयर पास्ट, प्रेजेंट ऐंड फ्युचर' में वे कहते हैं-

"नि:संदेह उनके पास बहुत सी और गंभीर समस्याएं हैं, लेकिन उनमें ऐसा एक भी नहीं है जो जादुई शब्द 'शिक्षा' से दूर न हो सके।"[20]

मूल्य-आधारित शिक्षा के संबंध में एक जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है- इन मूल्यों का नियमित अभ्यास जिससे कि वे हमारे चरित्र में आत्मसात हो सकें। हम अक्सर उद्धृत करते हैं कि 'ज्ञान शक्ति है'। जबकि वास्तव में ज्ञान केवल 'संभाव्य शक्ति' है। यह 'वास्तविक शक्ति' तभी बनती है जब हम दैनिक जीवन में उस ज्ञान का अभ्यास कर उसे अपने चरित्र का अनिवार्य हिस्सा बना लें। इतिहास साक्षी है कि केवल अच्छी किताब पढ़कर शायद ही किसी ने दुनिया के ऊपर कोई अमिट छाप छोड़ी हो। यह उन विचारों का अभ्यास और अनुप्रयोग था जिसने मानव इतिहास में अंतर पैदा किया। जैसा कि 'राज-योग' के अध्याय दो- 'द फर्स्ट् स्टेप्स' में विवेकानन्द लिखते हैं—

"अभ्यास अनिवार्यत : जरूरी है। आप यहाँ बैठकर मुझे प्रतिदिन घंटों सुनते रहें, किन्तु यदि आप अभ्यास नहीं करेंगे तो आप एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाएंगे। सब कुछ अभ्यास या कार्य-व्यवहार पर निर्भर करता है। हम इन बातों को कभी भी नहीं समझ पाएंगे यदि हम उनका अनुभव नहीं करेंगे। हमें इन्हें समझना और अपने लिए महसूस करना होगा।"[21]

मूल्य-आधारित शिक्षा के संबंध में कुछ विदेशी चिंतकों ने भी बहुत सारगर्भित विचार व्यक्त किए हैं। हार्वर्ड विश्वविद्यालय में दिये गए अपने प्रसिद्ध व्याख्यान में जब अमेरिकी कवि आर डब्लू इमर्सन (1803-1882) ने कहा कि 'चरित्र का स्तर बुद्धि से ऊँचा होता है।'[22] तो युवा-मस्तिष्क पर इस सूत्र ने एक अमिट छाप छोड़ी। यहाँ उन्होंने बौद्धिक मूल्य के बजाय नैतिक मूल्य के विकास पर ज्यादा जोर दिया। इस व्याख्यान में इमर्सन ने मानवीय सद्गुणों की स्थापना पर पुन: जोर दिया, जिसकी प्रस्तावना अरस्तू ने ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में अपनी पुस्तक 'द निकोमियन एथिक्स' में की थी किन्तु जिसे बाद के नीतिशास्त्र की दो मुख्य धाराओं परिणाम-निरपेक्षवाद (कांट) और परिणाम-सापेक्षवाद (बेंथम और जे एस मिल) ने जाने-अनजाने उपेक्षित कर दिया था। इस पुस्तक में अरस्तू ने दो तरह के

सद्गुणों नैतिक (साहस, उदारता, न्याय, मित्रता) और बौद्धिक (प्रज्ञा, अंतर्विवेक, कला) की व्याख्या की और मानव के समग्र विकास हेतु दोनों को ही महत्वपूर्ण माना।[23] बेंजामिन फ्रेंकलिन ने अपनी आत्मकथा में जिन तेरह सद्गुणों[24] (संयम, मौन, क्रमबद्धता, दृढ़-संकल्प, मितव्ययिता, समय की अहमियत, सच्चाई, न्याय, लचीलापन, स्वच्छता, शांत-चित्त, शुचिता और विनम्रता) के बारे में बात की उनमें लगभग सभी सद्गुण नैतिक हैं न कि बौद्धिक या आर्थिक। अब्राहम लिंकन ने अपने पुत्र के स्कूल-शिक्षक को जो पत्र लिखा था, वह तो मूल्य-आधारित शिक्षा के लिए एक आदर्श घोषणा-पत्र की तरह है। इस पत्र की अभिव्यक्तियाँ जैसे 'प्रिय शिक्षक, उसे पढ़ाएं कि हर शत्रु के बदले एक मित्र होता है, हर स्वार्थी राजनेता के बदले एक समर्पित नेता होता है। उसे ईर्ष्या से दूर रहना सिखाएं। इसमें समय लगेगा, मुझे पता है कि ज्यादा समय लगेगा, फिर भी यदि आप उसे पढ़ा सकते हैं तो पढ़ाएं कि कमाया हुआ एक डॉलर, पाये हुए पाँच डॉलर से ज्यादा कीमती है ..... उसे पढ़ाएं कि अपने शारीरिक और मानसिक शक्ति को तो वह ऊँचे दामों पर बेचे किन्तु अपनी अंतरात्मा का कभी कोई सौदा न करे।..... उसे पढ़ाएं कि गुस्सायी भीड़ के समक्ष साहस के साथ अकेले कैसे खड़ा हुआ जाता है। उसे प्यार से समझाएं किन्तु ज्यादा दुलारे नहीं क्योंकि अग्नि की आँच पर ही लोहा फौलाद बनता है।'[25], किसी भी विद्यार्थी के चरित्र को तराशने में बेहद सहायक हो सकती हैं।

मूल्य-आधारित शिक्षा के सम्बंध में एक शिक्षक का सबसे बड़ा दायित्व यह है कि वह विद्यार्थियों की ऐसी पीढ़ी तैयार करे जो कक्षा में ही नहीं अपितु कक्षा से बाहर की समस्याओं का भी साहस और आत्म-विश्वास से मुकाबला करे क्योंकि जीवन की असली परीक्षा तो तब होती है जब विद्यार्थी कॉलेज, विश्वविद्यालय की पढ़ाई पूरी कर व्यावहारिक जीवन की चुनौतियों से दो-चार होता है। जीवन की रण-भूमि में उसके किताबी-ज्ञान या प्रमाण-पत्र से ज्यादा महत्व उसके नैतिक मूल्य का होता है। जीवन की विषम-परिस्थितियों में साहस ही उसका सबसे बड़ा मित्र होता है। साहस के मूल्य को भारत के मशहूर वैज्ञानिक ए.पी.जे. अब्दुल कलाम[26] ने भी बहुत महत्वपूर्ण माना है क्योंकि साहस के अभाव में आप अन्य नैतिक मूल्यों का पालन निरंतरता के साथ नहीं कर पाएंगे। मूल्य-आधारित शिक्षा के संबंध में यह भी जानना महत्त्वपूर्ण है कि बच्चों के माता-पिता की भी इसमें बहुत बड़ी भूमिका होती है क्योंकि अपने नवनिर्माण-काल में बच्चे बहुत सारे मूल्य जाने-अनजाने अपने घर पर माता-पिता से ही सीखते हैं, इसके बाद शिक्षक की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी होती है। स्पेन के दार्शनिक जॉर्ज सांटायना ने तो यहाँ तक कह दिया था कि केवल स्कूल में शिक्षित बच्चा वस्तुतः अशिक्षित है।[27]

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि आज के शिक्षा-तंत्र की सबसे बड़ी समस्या इसका मनुष्य के बौद्धिक विकास पर अत्यधिक जोर देना है, यहाँ तक कि मानवीय मूल्यों की कीमत पर। हम इस बात को नहीं समझ पाए और न ही दूसरों को समझा पाए कि एक 'अच्छा मनुष्य' होना एक 'शिक्षित व्यक्ति' होने की तुलना में ज्यादा आवश्यक है। अशिक्षित होना एक सभ्य समाज के लिए समस्या हो सकती है किन्तु अनैतिक होना तो पूरी दुनिया के लिए एक त्रासदी है। आज का हर समझदार व्यक्ति शिक्षा के इस विपथगमन से बहुत चिंतित है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक के विकास ने ज्यादातर मनुष्यों को संवेदनशून्य बना दिया। उपभोक्तावाद के अति-लोभ ने अधिकांश लोगों को भौतिक वस्तु में रूपांतरित कर दिया, तभी तो ए पी जे कलाम को कहना पड़ा कि 'वी हैव गाइडेड मिसाइल्स बट मिस्गाइडेड ह्यूमन बीइंग्स'। व्यक्ति की आजीविका के लिए नौकरी शिक्षा का एक पक्ष थी, लेकिन विडम्बना देखिये कि उसे ही शिक्षा का अंतिम लक्ष्य मान लिया गया। अपनी पारखी दृष्टि से विवेकानन्द इन समस्याओं को वर्षों पहले ही समझ गए थे, इसलिए अपने लेखों व व्याख्यानों के माध्यम से उन्होंने इस खतरनाक प्रवृत्ति पर नियंत्रण लगाकर मनुष्य के समग्र विकास की बात की। उनके अनुसार 'सभी मनुष्य इस तरह से संरचित हैं कि उनके मन में दर्शनशास्त्र, रहस्यवाद, भावना और कर्म सभी समान रूप से विद्यमान हैं। यही लक्ष्य है, यही मेरे पूर्ण मनुष्य का लक्ष्य है।'[28] उल्लेखनीय है कि 1972 में प्रकाशित यूनेस्को की रिपोर्ट 'लर्निंग टू बी' में शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध में जो रूपरेखा तैयार की गयी थी, वह विवेकानन्द के इसी 'पूर्ण मनुष्य' की प्रतिध्वनि थी। रिपोर्ट में कहा गया कि 'शिक्षा के आधारभूत लक्ष्य की व्यापक परिभाषा के अनुसार एक व्यक्ति के भौतिक, बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक रूप से पूर्ण मनुष्य में समन्वीकृत होना ही शिक्षा है।'[29] अब जवाबदेही हम पर है कि हम मूल्य-आधारित शिक्षा के द्वारा उनके इस पूर्ण मनुष्य के लक्ष्य को साकार करें।

संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. स्वामी विवेकानन्द, द कंप्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, खंड-3, पृ 302 , अद्वैत आश्रम , कोलकता, 2015, आगे से सी डब्लू एस वी के रूप में उद्धृत.
2. सी डब्लू एस वी, खंड-4, पृ 505, अद्वैत आश्रम,

कोलकता, 2013.

3. सी डब्लू एस वी, खंड-5, पृ 342, अद्वैत आश्रम, कोलकता, 2015 .
4. वर्मा, निर्मल व गोयनका, कमल किशोर (सम्पा०), प्रेमचंद : रचना-संचयन, पृ 962, साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली, 2015.
5. सी डब्लू एस वी, खंड-3, पृ 50। वर्ष 2001 में दिल्ली विश्वविद्यालय के हॉस्टल में एक कार्यक्रम के दौरान विश्व-प्रसिद्ध शहनाई वादक बिस्मिल्लाह खान साहब ने मुझे एक बहुत महत्वपूर्ण बात बतायी, जो हम सभी के लिए बेहद प्रासंगिक है। खान साहब ने कहा कि बेटा यदि तुम्हारा अन्तर्मन प्रदूषित है तो तुम्हारी शहनाई से अच्छी धुन निकल ही नहीं पाएगी। हममें से बहुत लोगों को यह बात आसानी से समझ में नहीं आएगी, लेकिन बात सौ फीसदी सच है कि एक अच्छे कार्य के लिए हमारे मन का पवित्र होना बहुत जरूरी है। चरित्र और प्रतिभा में बहुत गहरा सम्बंध है। आज के 'प्रतिभाशाली लोग' इसे समझ नहीं पा रहे हैं, तभी तो हमारे शैक्षणिक संस्थानों से अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, अधिकारी, जज, राजनेता, अभिनेता तो खूब निकलते हैं लेकिन अच्छे इंसान बिरले ही निकल पाते हैं।
6. सी डब्लू एस वी, खंड-5, पृ 224। 1897 में,जब विवेकानन्द ने यह व्याख्यान दिया था तो उस समय देश में केवल चार विश्वविद्यालय थे कलकत्ता, बॉम्बे, मद्रास और इलाहाबाद। यह विवेकानन्द की दूरदृष्टि थी कि उन्होंने भारत की शिक्षा-व्यवस्था की विकृति को इतनी जल्दी भांप लिया था.
7. गांधी, महात्मा, द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरीमेंट्स विथ ट्रुथ, पृ 470, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 2006.
8. द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरीमेंट्स विथ ट्रुथ, पृ 373-374.
9. सी डब्लू एस वी, खंड-5, पृ 199.
10. सी डब्लू एस वी, खंड-8, पृ 329-30, अद्वैत आश्रम, कलकत्ता,1964.
11. सी डब्लू एस वी, खंड-4, पृ 497 .
12. plymouthministorage.com.10 फरवरी 2019 को उद्धृत.
13. https://www.brainyquote.com/quotes/martin_luther_king_jr; 402936, 05 जुलाई 2020 को उद्धृत। सी एस लेविस ने भी स्पष्ट रूप से कहा था कि 'मूल्यों के बिना शिक्षा देना मनुष्य को चालक दैत्य बनाने के समान है'.
14. सी डब्लू एस वी, खंड-2, पृ 145, अद्वैत आश्रम, कलकत्ता, 1968.
15. सी डब्लू एस वी, खंड-1, पृ 425, अद्वैत आश्रम, कोलकता, 2015.
16. श्री प्रिया नाथ सिन्हा के साथ एक वार्तालाप के दौरान स्वामी जी कहते हैं कि बेहतर होगा यदि लोग तकनीकी ज्ञान सीख लें जिससे उन्हें आजीविका के लिए कुछ काम मिल जाए। इसके लिए उन्होंने कुछ स्नातक विद्यार्थियों को जापान भेजने की भी योजना बनाई थी। देखें, सी डब्लू एस वी, खंड-5, पृ 367-372। विवेकानन्द भारत के वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के प्रति बेहद प्रतिबद्ध थे। इसलिए जुलाई 1893 में जब शिकागो के विश्व धर्म संसद के लिए जाते समय योकोहामा से वैंकूवर की यात्रा के दौरान, उनकी मुलाकात जमशेदजी टाटा से हुई तो उन्होंने उनसे भारत में वैज्ञानिक और तकनीकी शोध-संस्थान स्थापित करने के लिए निवेदन किया न कि धार्मिक संस्थाएं बनाने के लिए। इस प्रसंग का विस्तृत उल्लेख शंकरीप्रसाद बसु द्वारा बांग्ला में लिखी पुस्तक विवेकानन्द और समकालीन भारतवर्ष (1981) खंड पाँच के अध्याय 32 में किया गया है .
17. सी डब्लू एस वी, खंड-3, पृ 302। शिक्षा के संबंध में स्वामी विवेकानन्द के दृष्टिकोण पर स्वामी तथागतनंद लिखते हैं- "शिक्षा चरित्र का रूपान्तरण करती है। यदि कोई थोड़ी सी भी कमजोरी दिखाता, तो स्वामी जी आदेशात्मक स्वर में कहते 'कमजोरी पाप है कमजोरी मृत्यु है। यह एक महान तथ्य है : शक्ति जीवन है।' ..... उन्होंने सही शिक्षा के माध्यम से चरित्र के रूपान्तरण की सशक्त योजना बनाई।" फियर नॉट, बी स्ट्रॉग, पृ 42 से उद्धृत, अद्वैत आश्रम, कोलकता, 2014.
18. सी डब्लू एस वी, खंड-8, पृ 198 .
19. सी डब्लू एस वी, खंड-6, पृ 328, अद्वैत आश्रम, कलकत्ता,1978 .
20. सी डब्लू एस वी, खंड-5, पृ 231.
21. सी डब्लू एस वी, खंड-1, पृ 139। उन्होंने 20 फरवरी 1900 को पसाडेना से मिस मैरी हेल को एक पत्र में लिखा—"हम पुस्तकें पढ़ सकते हैं, व्याख्यान सुन सकते हैं , बहुत ज्यादा बात कर सकते हैं, लेकिन अनुभव एक अलग शिक्षक है, हमारी आँख खोलने वाला।" सी डब्लू

एस वी, खंड-8, पृ 492-93.

22. गॉर्डन मारिनो द्वारा संपादित पुस्तक एथिक्स द एसेन्शल राइटिंग्स, में राबर्ट कोल्स के द्वारा लिखे गए अध्याय 17 'The Disparity between Intellect and Character' से उद्धृत, पृ. 351, मॉडर्न लाइब्रेरी, न्यूयॉर्क, 2010.
23. अरस्तू, द निकोमियन एथिक्स, पृ 31-166, पेंगुइन, लंदन, 2004.
24. फ्रेंकलिन, बेंजामिन, ऑटोबायोग्राफी , पृ 67-71, सिमोन - स्चुस्टर, न्यूयॉर्क, 2004.
25. http://www.themorningchronicle.in/a-letter & from-abraham-lincoln-to-his-sons-teacher/, 04 जुलाई 2020 को उद्धृत।
26. कलाम, ए पी जे, फश्वर्ज योर फ्युचर, पृ 49 , राजपाल, नयी दिल्ली, 2014
27. https://www-brainyquote-com/quotes/george_ santayana; 107603, 25 जनवरी 2019 को उद्धृत।
28. सी डब्लू एस वी, खंड-2, पृ 388.
29. www.un.unesco.com.10 फरवरी 2017 को उद्धृत।